ज्ञान तत्व 183,
(क) लेख, गाय की रोटी कुत्ता खाय।
(ख) लेख, मंहगाई का हल्ला या यथार्थ ।
(ग) वैद्यनाथ चौधरी द्वारा वोट न डालने की चर्चा और मेरी समीक्षा ।
(घ) रवीन्द्र सिंह पत्रकार द्वारा पूंजीवाद का विरोध और मेरी समीक्षा ।

(क) गाय की रोटी कुत्ता खाय

लोक तंत्र के तीन स्तंभ माने जाते है 1 विधायिका 2 न्यायपालिका 3 कार्य पालिका। पूरे विश्व मे लोकतंत्र की प्रतिष्ठा बढी और वही तानाशाही का एकमात्र विकल्प मान लिया गया। लोकतंत्र के तीनो स्तंभो के पास अधिकार भी बढे और शक्ति भी और इसी अनुपात मे लोकतंत्र के तीनो स्तंभो मे विकृतियॉ भी बढी। आज लोकतंत्र वरदान है या अभिशाप यह भी एक चर्चा का विषय बन गया है।

राज्य और समाज के बीच मीडिया मध्यस्थ की भूमिका निभाता रहा है। मीडिया दोनो पक्षो को सलाह भी देता रहता है और सूचनाऍ भी। मीडिया राज्य और समाज के बीच जीवंत संवाद की स्थितियॉ बनाता रहता है । आदर्श स्थिति मे मीडिया न राज्य के पक्ष मे होता है न समाज के पक्ष मे क्योकि उसकी तो भूमिका ही मध्यस्थ तक सीमित रहती है।

पिछले कुछ वर्षो से मीडिया को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ बनने की धुन सवार हुई। उसने धीरे धीरे स्वय को चौथा स्तंभ मानना भी शुरू किया और उसी अनुसार मीडिया का सम्मान तथा समाज पर दबाव भी बढा। मीडिया के लोग शक्तिशाली हुए । और ज्यों ज्यों मीडिया लोकतंत्र का चौथा स्तंभ बनने लगा और उसके पास राज्य की शक्ति और प्रभाव बढने लगा, उसी के अनुपात मे मीडिया मे लोकतंत्र के गुण और अवगुण भी बढते गये। आज यदि समीक्षा करे तो प्रभाव की दृष्टि मे भी मीडिया लोक तंत्र का चौथा स्तंभ बन गया है और गिरावट के स्तर पर भी।

अभी अभी सम्पन्न दो हजार नौ के आम चुनावों मे मीडिया का पतित स्वरूप स्पष्ट दिखा। बडे बडे अखबारों के मालिको ने अपने आदर्श मीडिया को छोडकर मीडिया का खुलकर व्यापार किया । विज्ञापनो को समाचार के रूप मे प्रस्तुत किया गया। या तो राजनैतिक दलों से ही सौदे बाजी कर ली गई या उम्मीदवारो से। समाज को पता ही नही चला कि कौन सा समाचार विज्ञापन है और कौन सा यथार्थ। बहुत पहले यह कार्य चोरी चोरी स्थानीय कार्यकर्ता करते थे जो बाद मे बडे पदाधिकारियो तक बढ. गया और अब तो खुले आम अखबारो के मालिक लोगो ने यह व्यापार किया।

कुछ इक्का दुक्का मीडिया कर्मियो ने इस व्यापार के विरूद्ध आवाज उठाई। प्रभाष जी जोशी ने इसके खिलाफ कई लेख लिखे। प्रथम प्रवक्ता पाक्षिक ने तो इसके खिलाफ एक अभियान ही छेड दिया। कई प्रमुख लोगो ने अपने विचार दिये। पूर्व के केन्दीय मंत्री हरमोहन धवन, समाजवादी नेता मोहन सिह जी, भारतीय जनता पार्टी के लालजी टंडन , भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के अतुल अन्जान जी आदि ने अपनी आप बीती बताई। किस तरह खुलकर पैसे मांगे गये? बाकायदा मालिक लोगो ने मांगे। खुलकर मांगे। व्यावसायिक तरीके से मांगे। किसी भी तरह पैसे मांगने मे कोई शर्म भाव नही था। पूरी तरह मोलभाव किया गया। खास बात यह भी कि उन अखबार मालिको ने भी कोई लेहाज नही किया जिन्हे इन नेताओ ने राजनैतिक लाभ पहुॅचाया था। प्रथम प्रवक्ता ने अपनी पत्रिका के मुख पृष्ठ का शीषर्क दिया '' बिकाऊ मीडिया खरीददार नेता ''। अखबारो का अनुभव इस शीर्षक के सर्वथा उपयुक्त था।

इन सब सच्चाइयो के आधार पर स्पष्ट है कि अखबारो के चरित्र मे गिरावट आई। विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या यह गिरावट वर्तमान लोकतांत्रिक संस्कृति के विपरीत है ? वर्तमान लोकतंत्र के तीन प्रमुख स्तंभ है 1 विधायिका 2 कार्य पालिका 3 न्यायपालिका। वर्तमान लोकतांत्रिक चरित्र के अन्तर्गत विधायिका पूरी तरह व्यवसाय बन गई है। कार्यपालिका का चरित्र अपवाद स्वरूप ही व्यवसाय बनने मे कुछ कम हो। न्यायपालिका उस दिशा मे तेजी से बढ रही है। यदि लोकतंत्र के तीन स्तंभ पूरी तरह व्यावसायिक बन चुके हों और मीडिया धीरे धीरे उसी लोकतंत्र का चौथा स्तंभ बन रहा हो तो इसमें किसी को इतनी हाय तोबा क्यो मचानी चाहिये ? लोकतंत्र के अन्य तीन स्तंभो के बाद ही तो मीडिया उस राह पर चला है। सबसे आश्चर्य तो इस बात का है कि मीडिया के व्यवसायीकरण की आलोचना वह वर्ग कर रहा है जिसके बहुमत ने

मीडिया को चुनावों मे खरीदा हो। जिन लोगो ने मीडिया को करोडो रूपये चुनाव मे दिये वे किन राजनैतिक दलो के लोग थे ? या वे किस बिरादरी के लोग थे ? हमारे निन्यान्नवे प्रतिशत उम्मीदवार व्यावसायिक नीयत से चुनाव लड रहे है। उनकी एक भी गतिविधि न सामाजिक है न राष्ट्रीय। ऐसे व्यवसायी राजनेताओ को मीडिया पूरी इमानदारी पूर्वक चुनाव जिता दे तो यह होगी समाज सेवा और यदि मीडिया भी उस भ्रष्टाचार मे हिस्सा ले ले तो उसका चरित्र पतन हो गया। जो उम्मीदवार धन नही दे सके या बिना दिये ही वह पद पाने की दौड लगा रहे हो वे अब बहुत हाय तोबा मचा रहे है कि मीडिया का चरित्र गिर गया। जब लोकतंत्र का ही कोई चरित्र नही बचा है तो मीडिया बेचारा क्या करे ?

आप जरा सोचिये कि यदि कोई अखबार वाला बूटा सिंह जी से चुनाव मे धन ले ले तो कौन सा बहुत बडा अपराध हो गया ? जिन भी राजनेताओं से मीडिया वालो ने धन लिया है उन सबने कई गुना अधिक कमाने की दौड लगा रखी थी। दुर्भाग्य यह रहा कि अब तक मीडिया इस व्यवसाय से या तो दूर था या छिपे छिपे था किन्तु इस बार वह भी लोकतंत्र के अन्य तीन स्तंभो के साथ शामिल हो गया । इक्का दुक्का मीडिया कर्मी मीडिया की इस (अ) लोकतांत्रिक प्रगति के विरूद्ध विधवा विलाप कर रहे है। प्रभाष जी को दुख है कि इतने स्पष्ट आरोपो के बाद भी इस संबंध मे न मीडिया मे बहस छिडी न समाज मे। प्रभाष जी को तो उम्मीद थी कि उनके लेखो से कोई तूफान खडा होगा किन्तु यहॉ तो साधारण हवा भी नही । मै समझता हूँ कि गलती मीडिया की न होकर प्रभाष जी की हैं। लोकतंत्र के तीन स्तंभ आकंठ भ्रष्टाचार मे लिप्त है। चौथा स्तंभ उन्हे रोक तो सकती नही। या तो आदर्श बनकर प्रभाव शून्य हो जावे या व्यावहारिक बनकर उन्ही की लाइन पर चल पडे। भ्रष्टाचार की मलाई खाने की दौड मे शामिल लोगों की सहायता के लिये मीडिया ने अपना हिस्सा पहले ही ले लिया। इसमे मीडिया ने क्या अपराध कर दिया ?

लोकतंत्र के इस चौथे स्तंभ का आदर्श वाद छोडकर व्यवसाय की लाइन पकडना समाज के लिये धातक है यह बात सही है। यदि एक एक करके इसी तरह लोकतंत्र के स्तंभ अपनी जाति बदलकर भ्रष्टाचार मे शामिल होते गये तो इसका समाधान कैसे होगा ? किन्तु इस सच्चाई के साथ साथ यह बात भी सही है कि मीडिया की आलोचना इसका कोई समाधान नही है। राजनेताओं को तो इसलिये आलोचना नही करनी चाहिये कि वे स्वंय ही मीडिया से कई गुना अधिक भ्रष्ट भी है तथा भ्रष्टाचार के लिये ही चुनावो की दौड मे भी है। मीडिया कर्मियो को भी इस संबंध मे मीडिया की आलोचना जोर शोर से नही उठानी चाहिये क्योकि लोकतंत्र के ही एक स्तंभ ने लोकतंत्र के ही दूसरे स्तंभ से लोकतंत्र को ही मजबूत करने के लिये धन लिया है। किसी अन्य वर्ग से किसी अन्य पवित्र कार्य की दौड मे तो यह पाप किया नही गया है । इस तरह तो प्रभाष जी तथा अन्य लोग उन मतदाताओ को भी भ्रष्ट कहना शुरू कर देंगे जो यह देखकर कि चुनाव लड रहे सभी उम्मीदवार भ्रष्ट भी है और भ्रष्टाचार के लिये ही चुनाव लड रहे है, अपना हिस्सा पहले लेकर ही वोट देते है। मै तो पचास वर्षो से लोगो को सलाह देता रहा हूँ कि यदि आपको कोई इमानदार उम्मीदवार न दिखे तो या तो वोट ही मत दीजिये या पहले ही जो मिले वह ले लीजिये तब वोट दीजिये। ऐसे ही मुफत मे इस भ्रष्ट दौड मे अपना वोट देकर हाथ गंदा मत करिये।

हम राजनिति और मीडिया को एक ही तराजू पर नही तौल सकते। मीडिया का इमानदार होना मीडिया का कर्तव्य है किन्तु समाज का अधिकार नही क्योकि मीडिया का कार्य समाज की अमानत न होकर मीडिया का व्यवसाय है। राजनैतिक पद समाज की अमानत है। राजनैतिक चरित्र राजनेताओ का कर्तब्य मात्र न होकर उनका दायित्व है। गृहस्थ की वासना और गेरूआ वस्त्र धारी सन्यासी की वासना मे अन्तर है। मीडिया की चरित्र हीनता उतना गंभीर मामला नही है जितना राजनैतिक चरित्र पतन। दुर्भाग्य ही है कि राजनैतिक रूप से पतित लोगो की तुलना मे मीडिया के चरित्र की समीक्षा करने की कोशिश की जा रही है।

मेरी अपने मीडिया के मित्रों को सलाह है कि यदि आपको ऐसा विश्वास हो कि अब चुनावो के कम से कम आधे लोग तो समाज सेवा के लिये तथा राजनीति के व्यवसायीकरण के विरूद्ध संधर्ष के लिये मैदान मे है तब तो आप मीडिया को भी सलाह दे कि वह इस पवित्र संधर्ष मे भ्रष्टाचार न करे अन्यथा हमारे मीडिया के चरित्रवान साथियो को अपनी कीमती सलाह अपने पास ही रखनी चाहिये। लोकतंत्र की पवित्रता न कार्यपालिका कायम कर सकती है न न्यायपालिका और न ही मीडिया क्योकि ये सब तो सिर्फ विधायिका की पालकी ढोने वाले मात्र है। भारतीय लोकतंत्र का वास्तविक चीर हरण तो सिर्फ राजनेताओ का अधिकार है और उन्होने स्वयं को भारतीय संविधान रूपी कवच से सुरक्षित कर रखा है। अब आप कहारों को इमानदारी से पालकी ढोने की सलाह दे रहे है या कहारों को अधिक से अधिक धन वसूलने की सलाह दे रहे है यह आपका काम है।

मै तो चाहता हूँ कि हमें वर्तमान वातावरण मे आदर्श और शराफत की धातक शिक्षा देने की अपेक्षा या तो चुप रहना चाहिये या ठीक ठीक विश्लेषण करके समझदारी की तथा व्यावहारिक सलाह देनी चाहिये अन्यथा गाय की रोटी कुत्ता खाता रहेगा और हम अपने साथियो को और जोर शोर से गाय के नाम पर रोटी निकालने की सलाह देते रहेगें।

(ख) '' मंहगाई का हल्ला ''षडयंत्र या यथार्थ

भारत मे फिर से मंहगाई एक मुद्दा बनने लगा है। अब अनेक आवश्यक प्राथमिकताएँ पीछे छूटकर मंहगाई शीर्ष पर आने वाली है। सूखा और अकाल इस वातावरण मे और भी अधिक सहायक होंगे । एक पडयंत्र कारी लहर चलनी शुरू हो चुकी है।
कुछ बाते पूरी तरह स्पष्ट है

1. पिछले एक वर्ष से आम उपयोग की वस्तुएँ दाल, चावल, गेहूँ सब्जी खाने का तेल आदि मंहगी हुई है।
2. पिछले एक वर्ष से लोहा, डीजल पेट्रोल , बिजली आदि सामान अपेछा कृत सस्ते हुए है।
3. आम उपभोक्ता वस्तुएँ दस पंद्रह प्रतिशत मंहगी हुई है और खास उपभोक्ता वस्तुएँ बारह से सत्रह प्रतिशत तक सस्ती हुई है । मंहगाई कुल चौदह प्रतिशत घटकर शून्य से भी नीचे चली गई है।
4. आज भारत की शत प्रतिशत आबादी मंहगाई से त्रस्त है और महसूस कर रही है कि मंहगाई में उसके सामान्य वर्ग ,तथा गरीब से गरीब भी शामिल है।

मै पिछले पचास वर्षो से पूरे भारत मे अकेला ऐसा व्यक्ति हूँ जो लिखता रहा हूँ कि मंहगाई का न कोई अस्तित्व है न कोई दीर्घकालिक प्रभाव । मेरा तो यह भी मानना रहा है कि षडयंत्र पूर्वक मंहगाई का प्रचार किया जाता है । पचास वर्षो के बाद भी मै किसी व्यक्ति को विश्वास नही करा सका कि मंहगाई का न दीर्घकालिक प्रभाव है न अस्तित्व। मंहगाई के समर्थक मेरे कथन से तुरन्त सहमत भी हो जाते है। यही एक जटिल प्रश्न है कि मेरे कथन से सहमत व्यक्ति भी एक दो घंटे बाद ही जब सामान खरीदने जाता है तब मंहगाई के पक्ष मे उसकी कमर टूटने लगती है।

न मंहगाई है न उसका दीर्घकालिक प्रभाव यह बात पूरी तरह सच है। आज से पचास वर्ष पूर्व भी ऐसा ही प्रचार था जैसा एक वर्ष पूर्व था या आज है प्रश्न उठता है कि आज जिन वस्तुओ मे पिछले वर्ष की अपेक्षा पंद्रह प्रतिशत की मुल्य वृद्वि हुई वे वस्तुएँ आज से एक वर्ष पूर्व सस्ती थी और उस समय की मॅहगी वस्तुऐ आाज सस्ती है तो प्रश्न उठता है कि उस समय महॅगाई का आज की तरह हल्ला क्यो था? उस समय लोहा, डीजल, पेट्रौल, आदि महॅगा हो रहा था जबकि अनाज दाल गेहूँ खाद्यतेल सस्ता था उस समय भी महॅगाई का बहुत हल्ला और प्रभाव था आज उस समय की मॅहगी वस्तुऐ सस्ती आौर सस्ती वस्तुऐ मॅहगी हो गई तब भी मॅहगाई का हल्ला उसी तरह है मेरे निकट सहयोगी ओम प्रकाश दुबे जी और आर.एन.सिह जी एक वर्ष पूर्व भी मॅहगाई से इतने परेशान थे कि एक दिन मुझसे झगडने भी लगे और मैं चुप हो गया। आज स्थितियॉ विपरीत होने के बाद भी वे मॅहगाई से त्रस्त है। लोहा मॅहगा अनाज सस्ता हो तब भी मॅहगाई से कमर टुट गई और लोहा सस्ता अनाज मंहगा हो तब भी मंहगाई से कमर टूट गई। पता नही इन हल्ला करने वालो की कमर किस धातु की बनी है कि साठ साल से रोज कमर टूटती है और वास्तव मे कमर कभी टूटती ही नही। स्वाभाविक है कि एक ऐसा गिरोह है जो लोहा मंहगा हो तब भी मंहगाई चिल्लाता है और लोहा सस्ता होकर अनाज मंहगा हो तब भी चिल्लाता है। अन्यथा दोनो विपरीत स्थितियो मे भी हल्ला एक समान क्यो ?

यह पडयंत्र क्या है और इसमे शामिल कौन है। उनका स्वार्थ क्या है। सच्चाई यह है कि गरीबी , बेरोजगारी , मंहगाई , मुद्रा स्फीति सेन्सेक्स , विकास दर , आदि ऐसे शब्द है जो पडयंत्र के भाग है। जो पडयंत्र कारी है वे इन शब्दो का खूब और इतना प्रचार करते है कि सामान्य व्यक्ति इन शब्दो के भावनात्मक प्रभाव से प्रभावित होने लगता है जबकि न तो सामान्य व्यक्ति इनका अर्थ समझता है न प्रभाव। रात को सोने के पूर्व भूत प्रेत की चर्चा का सपने पर जो प्रभाव होता है वही प्रभाव इन सब पर साठ वर्ष से है।

इस षडयंत्र मे शामिल है सभी राजनेता , सरकारी कर्मचारी और बडे सम्पन्न लोग । ये लोग योजना पूर्वक कलाकारो तथा मीडिया का उपयोग करके इस भूत को जीवित किये रहते है। दुख है कि पूरे भारत में एक भी नेता ऐसा नही जो मंहगाई के प्रचार मे न लगा हो। यहॉ तक कि मनमोहन सिंह भी नही। वे भी एक वर्ष पूर्व जब आम उपभोक्ता वस्तुएँ सस्ती थी और लोहा डीजल मंहगा तो वे मंहगाई के बुरे प्रभाव को दूर करने की योजनाएँ बनाते रहते थे। दूसरी ओर आज भी वे मंहगाई को स्वीकार करके उसे घटाने का वादा करते नजर आ रहे हैं । सरकारी कर्मचारी और पूँजीपति तो इसमे लगा ही रहता है। मुख्य प्रश्न यह है कि गरीबी, बेरोजगारी, महॅगाई,मुद्रा स्फीति ,सेन्सेक्स, विकास दर आदि प्रभावहीन शब्द है तो फिर इनके पीछे राजनेता ,कर्मचारी, और पूँजीपति का स्वार्थ क्या है? आखिर वे तीनो अलग अलग अथवा मिलकर यह षडयंत्र क्यो कर रहे है? यह एक गहरे षडयंत्र का भाग है।इन तीनो का अलग अलग स्वार्थ है। राजनेता के लिये तो सता को बदनाम करने का यह सबसे आसान मार्ग है। भारत मे तेा इसका गंभीर परिणाम सिद्व भी हेा चुका है जब टमाटर और प्याज ने भी सरकार बदल दी थी। सतारूढ लोग भी इस भ्रम से टकरा नही सकते क्योकि उन्हे भी कभी इसी शब्द का सहारा लेना पडा था। इस लिये समाज मे भ्रम दुर होना वे अच्छा नही मानते दुसरा समुह है कर्मचारीयो का यदि मॅहगाई स्थिर हेा जावे तेा कर्मचारी वेतन वृद्वि मे घपला नही कर सकेगें। बासठ वर्षेा में जिस अनुपात में वस्तुओ के मुल्य बढे है उसकी अपेक्षा बहुत अधिक मात्रा में वेतन बढे। स्वतत्रता के बाद यदि मंहगाई सत्तर गुनी बढी है तो वेतन इसकी तुलना मे बहुत अधिक बढा है और यह सब घपला हुआ है मॅहगाई शब्द की कृपा रही पुँजीपतियों तथा मध्यम वर्ग को दो शब्दो से खास भय था 1 आर्थिक असमानता 2 श्रम मूल्य वृद्वि। हर मध्यम या सम्पन्न वर्ग का व्यक्ति चाहता है कि श्रम मूल्य और आर्थिक असमानता पर ना कोई चर्चा हेा ना कोई योजना बने। इन दोनो पर यदि चर्चा हुई तेा इन सब पर व्यापक व दीर्घकालिक प्रभाव पडना निश्चित है इसलिये वे लोग चाहते है कि सम्पूर्ण समाज मॅहगाई ,गरीबी सेन्सेक्स बेरोजगारी ,विकास दर ,मुद्रा स्फीति जैसे भावनात्मक और प्रभावहीन शब्दो के साथ खेलता रहे और आर्थिक असमानता श्रम शोषण पर कोई ध्यान न दें।

इन राजनेताओं पूँजीपतियो , सरकारी कर्मचारियों को बुद्धि जीवी वर्ग का भी भरपूर समर्थन प्राप्त होता रहता है क्योकि यह वर्ग इन तीनो के साथ मिलकर ही लाभ उठाता रहता है । बुद्धिजीवी वर्ग हमेशा कोशिश करता है कि उसे सुविधा राजनेताओं शासकीय अधिकारियो तथा पूँजीपतियो से ही संभव है क्योंकि जिनके पास कुछ है वही तो देगा अन्यथा गरीब ग्रामीण श्रमजीवी उसे क्या और कहॅा से देगा। इसलिये हर बुद्धिजीवी मंहगाई शब्द को विस्तार देता रहता है। हर बुद्धिजीवी लेखक पत्रकार कलाकार को पता है कि किसान बहुत खराब हालत मे है स्वतंत्रता के बाद रूपये के सामान्य मूल्य के अनुपात मे भी गेहूँ का मूल्य सोलह रूपया से कम नही होना चाहिये तथा कृषि उत्पादन में वृध्दि के लिये खेती को लाभदायक बनाना ही होगा। खेती भी लाभदायक हो और श्रम शोषण भी न हो इसके लिये कृषि उपज तथा श्रम मूल्य को बढाने के अलावा कोई मार्ग नही। किन्तु हर बुद्धिजीवी या शिक्षा मे खर्च बढाने की मांग करता है या तो मंहगाई घटाने की । आवश्यकता यह है कि ऐसे संवेदनशील मुददे पर समाज मे एक सार्थक बहस शुरू हो।

मेरा आपसे पुनः निवेदन है कि आर्थिक समस्याओ पर भ्रम पैदा करने के अन्तर्राष्ट्रीय षडयंत्र को विफल करने मे आगे आवें और पूँजीवाद साम्यवाद समाजवाद के भ्रामक शब्द जाल की अपेक्षा यथार्थ पर जोर दें जिससे मंहगाई सहित भ्रामक शब्द जाल टूट सके।

प्रश्न – अमेरिका मे शाहरूख खान से पूछताछ पर इतना हल्ला हुआ। आप क्या समझते है ?

उत्तर– शाहरूख खान की पूछताछ कोई पहला मामला नही है। इसके पहले जार्ज फर्नान्डीस या अब्दुल कलाम के मामले मे भी ऐसा ही हो चुका है । यह कोई नया तरीका तो है नही।

प्रश्न उठता है कि आप मेरे धर मे आवे और मेरा सुरक्षा गार्ड आपके साथ समानता तथा सामान्य व्यक्ति के समान व्यवहार करे तो मुझे आपत्ति क्यो ? सुरक्षा गार्ड को यह हिदायत दी गई कि यदि कोई मुसलमान आवे तो थोडी विशेष पूछताछ करो। शाहरूख या अबुल कलाम से इसमे क्या अन्याय हो गया ? आज पूरी दुनिया मे मुसलमान संदेह की नजर से देखे जा रहे है। यदि शाहरूख को भी मुसलमान होने के कारण सतर्कता बरती गई तो इसमे चिल्लाने की अपेक्षा आत्मनिरीक्षण ज्यादा जरूरी है। किसी को बम्बई मे मकान नही मिला तो उसने आसमान सर पर उठा लिया। मुसलमानो पर पूरी दुनिया मे संदेह हो गया है यह बात सच है । इस सच को न

अमेरिका कह रहा है न भारत। न हिन्दू कह रहा है न इसाई। समझ सब रहे है। यह बात मुसलमान क्यो नही समझता ? यदि कुछ मुसलमान सिर्फ यह घोषित कर दे कि जैसा शिया सुन्नी बहाबी आदि है वैसे ही एक नई जमात बन रही है जिसका नाम ..... है। इस जमात का मुसलमान सब मामलों मे तो मुसलमान होगा किन्तु 1 अहिंसक होगा 2 धर्म के नाम पर बने संगठन का सदस्य नही होगा 3 धर्म परिवर्तन का समर्थन नही करेगा 4 समान नागरिक संहिता को स्वीकार करेगा। 5 एक से अधिक विवाह नही करेगा। प्रश्न उठता है कि आपको क्या दिक्कत होगी इससे। यदि नरेन्द्र मोदी को साम्प्रदायिक मानकर विदेश में विशेष व्यवहार संभव है तो मुसलमान होने के कारण पूछताछ मे क्या आपत्ति।

दुख की बात है कि जिस बात को आप अपमान कहते है उसके बाद भी वहॉ जाने को लालायित क्यो रहते है ? धन कमाना है अमेरिका से। सम्मान और सुविधा लेनी है अमेरिका से । और जॉच से गुजरना हो तो मुसलमान और भारतीय याद आ गये। इस तरह जैसे भारत की जनता ने अपना प्रतिनिधि बनाकर किसी सामाजिक काम से भेजा हो। अम्बिका सोनी ने तो और भी कमाल की बात कह दी कि हर अमेरिकी के साथ भी वही व्यवहार होना चाहिये। क्या अम्बिका जी को यह बात कहनी चाहिये थी ? क्या यह कहना उचित है? क्या यह करना संभव है? यदि अमेरिका भी उतावला होकर यही कह दे कि ठीक है आप भी ऐसा करिये तब क्या समाधान हो जायगा ?

अब्दुल कलाम पूर्व राष्ट्रपति है। यदि नियमानुसार पूर्व राष्ट्रपति जॉच से बाहर नही है तो अब्दुल कलाम जी को जॉच कराने मे अपमान क्या है? अब्दुल कलाम सरीखा आदर्श व्यक्ति राष्ट्रपति पद से हटने के बाद भी नियम विरूद्ध विशेष व्यवहार की अपेक्षा करे यह अच्छी बात नही। चाहिये तो यह था कि अबुल कलाम साधारण व्यक्ति के समान व्यवहार करने वाले की यह कहकर प्रशंसा करते कि ऐसा ही समान व्यवहार करने वाले की आदत भारतीय कर्मचारियो को भी डालनी चाहिये। कल्पना करिये कि नेपाल के पूर्व प्रधान प्रचण्ड कही जावें तो उन्हे पूर्व प्रधान के नाते छूट मिलनी संभव है? कब कोई व्यक्ति प्रधान है और कब पडयंत्रकारी आतंकवादी इसका निर्णय जॉच कर्ता नही कर सकता। इसका निर्णय तो व्यवस्था करेगी। मै नही समझता कि जार्ज, कलाम या शाहरूख को नियम विरूद्ध विशेष व्यवहार की अपेक्षा करनी चाहिये। यदि दुनिया भर मे ऐसी समान व्यवस्था बढती है तो यह एक अच्छी बात ही होगी और इसे प्रोत्साहित करने की जरूरत है।

(ग) श्री वैधनाथ चौधरी, उन्नाव ,बेगूसराय, बिहार

प्रश्न – आपने चुनाव मे वोट न डालने के लिये जो तर्क दिये वे संतुष्ट करते है । गंभीर चर्चा जारी रहनी चाहिये । दो हजार नौ के आम चुनावो ने बाहुबलियों को किनारे किया इतने से ही राजनीति सुधर गई ऐसा मानना भूल होगी । अभी तो राजनीति के शुद्धिकरण का अभियान लम्बे समय तक चलाने की आवश्यकता है ।

बाबा रामदेव की सांसद योग्यता पर भी आपने जो टिप्पणी की है वह बहुत सटीक है शिक्षा को क्षमता के साथ तो तौला जा सकता है किन्तु चरित्र के साथ नहीं जबकि सत्ता के लिये क्षमता से अधिक चरित्र आवश्यक होता है ।

बंग जी इस उम्र मे भी सकिय है यह आश्चर्यजनक है अन्यथा सर्व सेवा संघ तो ओजहीन होता जा रहा है जो गांधी विनोबा जय प्रकाश के नाम का उपयोग कर रहा है, काम से तो मतलब है नहीं ।

उत्तर– यह विषय बहुत अधिक गंभीर होने से इसकी लम्बी विवेचना करनी आवश्यक है । यह विवेचना बहुत लम्बी भी हो सकती है इसलिये आप पाठक गंभीरता से पढ़ियेगा ।

दो अगस्त को अम्बिकापुर मे जर्नलिस्ट एसोसियेशन ने नक्सलवाद पर विचार गोष्ठी मे मुझे मुख्य वक्ता के रूप मे बुलाया था जिसमे मैने तानाशाही और लोकतंत्र की व्याख्या की । तानाशाही मे अव्यवस्था नही होती । या तो सुव्यवस्था होगी या कुव्यवस्था । आज तक पूरी दुनिया मे जहॉ

जहॉ भी तानाशाही रही है वहा कभी अव्यवस्था सुनने को नही मिली चाहे वह सद्दाम की तानाशाही हो या माओत्से तुंग की । नेपाल मे भी जबतक राजतंत्र था तब तक अव्यवस्था नही थी ।
लोकतंत्र यदि जीवन पद्धति मे आता है तो व्यवस्था होती है और शासन पद्धति तक आकर सिमट जाता है तो वह विकृत लोकतंत्र होता है जिसका निश्चित परिणाम होता है अव्यवस्था । जीवन पद्धति का लोकतंत्र लोक स्वराज की दिशा मे झुका हुआ होता है और विकृत लोकतंत्र तानाशाही की दिशा मे । पश्चिम के देशो मे आदर्श लोकतंत्र है क्योकि वह लोक स्वराज की दिशा मे झुका हुआ है जबकि भारत पाकिस्तान , बंगलादेश , इराक नेपाल ,श्री लंका , अफगानिस्तान आदि दक्षिण एशिया के देशो मे विकृत लोकतंत्र है जो पश्चिम से आयातित है या थोपा हुआ है । जीवन पद्धति मे लोकतंत्र न आया न आने दिया गया । उसी का परिणाम है इन सभी देशो मे लगातार अव्यवस्था का बढना । अव्यवस्था के दो ही समाधान है
1 आदर्श लोकतंत्र अर्थात लोक स्वराज्य
2 तानाशाही ।
लोकतांत्रिक सरकारें ऐसी अव्यवस्था का समाधान बताती है ''विकास '' जबकि विकास अव्यवस्था का समाधान नही होता। भारत मे भी लगातार अव्यवस्था बढ रही है और सरकारे लगातार विकास के लिये प्रयत्न कर रहीं हैं । लोक स्वराज्य अथवा आदर्श लोकतंत्र की दिशा मे बढने की किसी की कोई रूचि नही है । सभी तानाशाही को गालियॉ देकर तानाशाही की दिशा मे बढने की कोशिश करते रहते है । इस कोशिश मे इस्लाम , संघ परिवार तथा साम्यवादी संवैधानिक तरीके से तानाशाही की दिशा मे बढने की कोशिश करते रहते है तो नक्सलवादी प्रत्यक्ष हिंसा के आधार पर ।

स्पष्ट दिखता है कि यदि भारत मे नक्सलवाद आया तो अव्यवस्था पूरी तरह समाप्त हो जायगी । चोरी, डकैती ,मिलावट , भ्रष्टाचार आतंकवाद अधिकारो की छीना झपटी साम्प्रदायिकता जातीय टकराव आदि या तो बहुत कम हो जायंगे या शासक तक केन्द्रित हो जायंगे । दूसरी ओर नक्सलवाद यदि आया तो पूरा समाज गुलाम हो जायेगा। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं रहेगी । राजा ही भगवान होगा । और सबसे बुरी बात यह होगी कि ऐसी तानाशाही से मुक्ति या बदलाव का भी हमारे पास या तो कोई मार्ग नही होगा या उसके लिये बहुत लम्बा बलिदान आवश्यक होगा । इस तरह ये दोनो ही मार्ग खतरनाक दिखते है । वर्तमान अव्यवस्था से हम मुक्ति चाहते है और तानाशाही रूपी नक्सलवाद की कल्पना से ही हम सिहर उठते है । नक्सलवादी अव्यवस्था के विरूद्ध आवाज उठा उठाकर वर्तमान व्यवस्था के विरूद्ध वातावरण बनाने मे सक्रिय रहते है तो अन्य सभी राजनैतिक दल नक्सलवाद को लोकतंत्र का शत्रु बताकर संभावित तानाशाही के खतरो से सचेत करने मे लगे रहते है जबकि सच्चाई यह है कि दोनो ही स्थितियॉ घातक है । न अव्यवस्था को लम्बे समय तक झेला जा सकता है न ही तानाशाही को आमंत्रित किया जा सकता है ।

स्वतंत्रता के बाद आज तक कभी इस संबंध मे स्पष्ट विवेचना नही हुई या तो गांधी जी इस बात को समझते थे या जय प्रकाश जी । बाकी सब लोग या तो सत्ता से लाभ उठाने की तिकडम मे लगे रहते थे या सत्ता की चर्चा से भी दूर भागने की कोशिश करते रहते थे । एक पक्ष के प्रबल

संवाहक थे नेहरू आदि तो दूसरे के थे विनोबा जी । बाकी सब तो दोनो मे से किसी एक मार्ग के पथिक मात्र थे । भारत की जनता नेंहरू जी के मार्गदर्शन मे विकृत लोकतंत्र की राह पर चलने लगी और सन दो हजार आठ आते आते नक्सलवाद या अव्यवस्था के बीच खतरा अनुभव करने लगी । तब एकाएक भारत की जनता को आभास हुआ कि यदि भारत इसी तरह विकृत लोकतंत्र की राह पर बढता रहा तो नक्सलवाद रूक नही सकता । चरित्र पतन होगा ही और चरित्र पतन के साथ साथ अव्यवस्था भी बढनी ही है । इसलिये लोकतंत्र के वर्तमान मार्ग को छोडकर भारत की जनता ने सीमित तानाशाही की ओर कदम बढाते हुए कांग्रेस पार्टी को मजबूत कर दिया । मैने अपना वोट इसलिये नही दिया क्योकि मै तानाशाही के भी विरूद्ध हूँ और अव्यवस्था के भी। किंन्तु यदि मै वोट देता तो निश्चित रूप से छत्तीसगढ मे रमन सिंह , बिहार मे नीतिश कुमार , गुजरात मे नरेन्द मोदी , दिल्ली मे शीला दीक्षित और केन्द्र मे मनमोहन सिंह जी को ही वोट देता ।

मै समझता हूँ कि कांग्रेस पार्टी को वोट देने का मतलब है आंशिक तानाशाही का समर्थन क्योकि वहॉ आंतरिक लोकतंत्र शून्य होकर एक परिवार का शासन है । फिर भी काग्रेस पार्टी मे अन्य केन्द्रीय दलो की अपेंक्षा चरित्र अधिक है । संघ परिवार मे काग्रेस की अपेक्षा चरित्र ज्यादा है किन्तु भाजपा मे तो पूरी तरह अव्यवस्था ही अव्यवस्था है ।

जिस दल का नेता अपने पद को दल की अमानत न समझकर अपना अधिकार मानता हो वह दल यदि तत्काल डूब जाय तो मुझे खुशी होगी। चूँकि वर्तमान अव्यवस्था और तानाशाही का विकल्प मेरी समझ मे लोकराज्य ही है इसलिये मैने अपना वोट देकर वर्तमान विकृत लोकतंत्र का समर्थन करना ठीक नही समझा जबकि बाबा रामदेव जी बिलकुल विपरीत सलाह देते रहे। उनका मानना था कि चरित्रवान लोगो को यदि सत्ता दे दी जाय तो सबकुछ ठीक हो जायेगा । मै उनके विचार से सहमत हूँ। किन्तु मेरा मानना यह है कि यह मार्ग लोकतंत्र के बिल्कुल विरूद्ध और केन्द्रित शासन अर्थात आंशिक तानाशाही की दिशा वाला है । यदि हमने यह मार्ग पकडा तो लाभ तो होगा पर दिशा गलत होगी । इसलिये मैने अपना मत व्यक्त किया कि हम अव्यवस्था और केन्द्रीयकरण के स्थान पर विकेन्द्रित व्यवस्था या अकेन्द्रित शासन अर्थात लोकस्वराज्य को ही मजबूत करना शुरू करे।

लोकस्वराज्य का अर्थ है लोकनियंत्रित तंत्र अर्थात तंत्र पर लोक का हावी होना । व्यक्ति पर कानून का , कानून पर संसद का ,संसद पर संविधान का और संविधान पर लोक का सशक्त होना ही आदर्श लोकतंत्र का मार्ग है । दुर्भाग्य से व्यक्ति पर कानून ,कानून पर संसद और संसद पर संविधान का शासन है किन्तु संविधान पर लोक का हस्तक्षेप न होकर उस पर पलटकर संसद का ही अधिकार हो गया और लोक को सांसद की नियुक्ति करने तक का आशिक अधिकार तो रहा किन्तु नियंत्रण का अधिकार नही रहा । यही एक मात्र कारण है कि लोकतंत्र विकृत हो गया ।

रामदेव जी द्वारा सांसद की योग्यता के मामले मे शि़क्षा को महत्वपूर्ण घोषित करने मे कही न कही भ्रम हुआ है । शिक्षा और ज्ञान बिल्कुल भिन्न योंग्यताऍ है जो किसी एक व्यक्ति मे एक साथ भी हो सकती है और पृथक पृथक भी। एक किसान यदि निरक्षर ही हो तो वह अज्ञानी नही भी हो सकता है । शिक्षा का संबंध कार्यक्षमता से तो है किंन्तु निष्कर्ष निकालने की क्षमता से नही । एक आई. ए. एस. शिक्षित तो हो सकता है किन्तु ज्ञान आवश्यक नही । कई आई. ए. एस. अशिक्षित

साधु संतो से भी मार्ग दर्शन लेते रहते है । इसलिये कार्यपालिका के लिये तो शिक्षा का मापदण्ड का आधार बनाया जा सकता है किन्तु विधायिका के लिये शिक्षा की जगह ज्ञान ही मापदण्ड होना चाहिये जिसका आधार है लोक का विश्वास न की शिक्षा । लोक यदि ज्ञान के साथ साथ शिक्षा को भी आधार बनावे तो भी ठीक है किन्तु लोक की विश्वसनीयता पर कानून द्वारा शिक्षा का आधार थोपना ठीक नही। उचित होगा कि रामदेव जी ज्ञान और शिक्षा को अलग अलग समझने का प्रयास करे ।

सर्व सेवा संघ ओजहीन हो रहा है यह बिल्कुल स्पष्ट है । तभी तो बंग जी को इस उम्र मे सकिय होने की जरूरत पडी। यह सर्व सेवा संघ के लिये कठिन समय है । चिन्ता का विषय ही है कि बंग जी की लोक स्वराज योजना का विरोध करके सरकार की चापलूसी करने का नेतृत्व और किसी संगठन , दल या व्यक्ति ने न उठाकर सर्व सेवा संघ के ही कुछ लोगो ने उठाया और सर्वोच्च सम्मानित प्रमुख , गांधी विनोबा जय प्रकाश के वर्तमान संयुक्त उत्तराधिकारी राही जी ने लिया । मै नही सोच पा रहा कि यह पहल बंग जी के विरोध स्वरूप हुई या लोक स्वराज्य योजना के विरूद्ध । यह तो आप लोगो को ज्यादा पता होगा क्योकि आप लोग सर्वोदय और सर्व सेवा संघ से जुडे लोग हैं और हमलोग लोक स्वराज्य योजना से जुडने वाले । मुझे बंग जी ने कई बार खादी पहनने की सलाह दी और मैने नही मानी । दूसरी ओर बंग जी ने मुझे लोक स्वराज्य के विषय मे समझाया और मैने लोक स्वराज्य का प्रयोग अपने परिवार पर भी लागू किया । आज मै बंग जी के पीछे इसलिये पागल हूॅ कि वे लोक स्वराज्य का मार्ग दर्शन कर रहे हैं । मै पुनः स्पष्ट कर दूॅ कि यदि कोई व्यक्ति लोक स्वराज्य के विरूद्ध वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था का समर्थक है तो मै उसका आलोचक भी हो सकता हूॅ और विरोधी भी और आवश्यकता अनुसार शत्रु भी । कोई व्यक्ति हमे गुलाम बनाकर रखना चाहे तो हम उसका समर्थन तो नही कर सकते । वर्तमान मतदान प्रकिया उस पर मुहर लगाने के समान ही है। इसलिये मै बंग जी के आंदोलन का पूर्ण समर्थक हूॅ और मतदान की गुलामी का विरोधी । फिर भी यदि मुझे किसी चुनाव मे ऐसा लगा कि कोई बहुत ही गलत आदमी जीतने जा रहा है तो वैसी स्थिति मे मै उस व्यक्ति को हराने मे अपना वोट दे भी सकता हूॅ । यह सब परिस्थिति पर निर्भर करेगा । यदि किसी चुनाव मे कोई लोक स्वराज्य के लिये प्रतिबद्ध दल या व्यक्ति खडा हो गया तो मै विनोबा जी या अन्य गांधीवादियो के समान बाहर न रहकर लोकस्वराज्य समर्थन शक्तियो की संवैधानिक मदद करूगा ।

अंत मे मै आपसे कहना चाहता हूॅ कि राजनीति का शुद्धिकरण कोई आदर्श स्थिति न होकर मजबूरी हो गयी है जो तानाशाही की दिशा भी है और खतरनाक भी । हमारी सारी शक्ति तो लोक स्वराज्य की दिशा मे ही लगनी चाहिये किन्तु अस्थाई तौर पर हमने यदि मजबूरी मे कुछ कदम उठा लिया तो भिन्न बात है।

(घ) श्री रवीन्द्र सिंह ,पत्रकार ,संवाद सरोवर , गुना , मध्यप्रदेश

ज्ञानतत्व बराबर मिलता रहता है । अंक एक सौ सतहत्तर मिला । मै सहमत हूॅ कि पूॅजीवादी अर्थ व्यवस्था सत्ता को नियंत्रित करती है और समाजवादी अर्थ व्यवस्था से संचालित होती है । साम्यवाद मे पोलिट व्यूरो ही सत्ता और पूंजी दोनो का मालिक बन जाता है। ऐसी स्थिति मे क्या

करना चाहिये हिन्दू कोड बिल की आलोचना निरर्थक है । इसने महिलाओं को आगे बढने मे सहायता की है। इसने साम्प्रदायिकता को भी कम किया है। आप इस विरोध के पीछे क्यो पडे है ? उत्तर – आपने बिल्कुल ठीक व्याख्या की है । आदर्श स्थिति तो सत्ता का अकेन्द्रीकरण है । मजबूरी मे सत्ता के विकेन्द्रीकरण को भी स्वीकार कर सकते है किन्तु सत्ता का केन्द्रीकरण तो गुलामी के अतिरिक्त कुछ और नही हैं। इसके लिये तो बिल्कुल भी सहमत होना संभव नही । शक्ति का किसी एक जगह पर इकठ्ठा होना उपयोगी कम और खतरनाक अधिक होता है । उचित मार्ग यही है कि शक्ति आवश्यकता से अधिक कही भी एकत्रित न हो । इस आवश्यक शक्ति एकत्रीकरण पर भी समाज का ऐसा नियंत्रण हो कि वह उच्श्रृंखल न हो । कल्पना करिये कि राज्य के पास ऐसी शक्ति हो गयी । ऐसी राज्य शक्ति के पास ही धन शक्ति का जुडना तो और भी घातक हो सकता है । निजीकरण मे कुछ दोष भी हो सकते है । या तो अर्थव्यवस्था के निजीकरण के उन दोषो को दूर किया जावे अथवा निजीकरण से अच्छा कोई विकल्प खोजा जाय । निजीकरण की अपेक्षा सरकारीकरण तो कई गुना अधिक घातक है । दुर्भाग्य से सरकारीकरण से लाभ उठाने वाले लोग निजीकरण को गाली देने मे आगे आगे रहते है क्योकि वे निजीकरण का कोई विकल्प तो बताते नही । उनका तो एक ही काम होता है कि निजीकरण का विरोध परोक्ष रूप से सरकारीकरण के पक्ष मे ही जायगा । साम्यवादी वामपंथी और कुछ समाजवादी भी इस प्रचार मे दिन रात लगे रहते है ।

निजीकरण का विरोध करने के लिये पूँजीवाद और अमेरिका जैसे शब्दो का प्रयोग लम्बे समय तक एक फैशन बना रहा । भारत मे कुछ ऐसा एक पक्षीय प्रचार हुआ कि पूँजीवादी और अमेरिका का समर्थन तो अलग बात रही , समीक्षा करना भी गाली के समान माना जाने लगा । यदि कोई व्यक्ति किसी मुद्दे पर पूँजीवाद, निजीकरण और अमेरिका पर तटस्थ बात बोलने लगे तो कई लोग एक साथ उस पर टूट पडते थे और चुप करा देते थे । अमेरिका एक पूँजीवादी देश है । उसने गुप्त रूप से अपने धन के बल पर अपने दलाल बनाये और धीरे धीरे परिस्थितियों को पलट दिया । अब पेशेवर सरकारीकरण समर्थको की आवाज कमजोर पडी है । पूँजीवादी देशो के समक्ष आये आर्थिक संकट के समय एकाएक ऐसे लोग बिलो से बाहर आकर शोर मंचाना शुरू किये थे परन्तु उनके शोर का भारत पर भी कुछ प्रभाव नही पडा । स्वाभाविक ही है कि अब नई स्थिति मे पूँजीवाद समाजवाद , सरकारीकरण और निजीकरण , अमेरिका और भारत के विषय मे समीक्षात्मक विचार मंथन को छूट मिलेगी । मै पूरी तरह सरकारीकरण के विरूद्ध हूँ क्योकि धन का निजी हाथो से इकठ्ठा होना एक खतरनाक कार्य है और उसका राज्य के पास इकठ्ठा होना तो उससे भी कई गुना अधिक खतरनाक है । इसलिये पूँजीवाद साम्यवाद और समाजवाद पर नयी विवेचना शुरू करनी चाहिये । मैने हिन्दू कोड बिल के विरोध मे कई तर्क दिये थे। यदि आप उन तर्को पर अपनी समीक्षा लिखते तो अधिक अच्छा होता । मै अब भी मानता हूँ कि हिन्दू कोड बिल समाज को साम्प्रदायिक पारिवारिक आधार पर तोडने का एक योजनावद्ध जहरीला प्रयास था जिसने अपना असर दिखाया भी है । इस बिल ने महिलाओं को आगे बढ़ने मे बहुत मदद की है तो मुस्लिम महिलाओं को इस लाभ से वंचित क्यो किया गया ?क्या मुस्लिम महिलाएँ भारतीय व्यवस्था का

अंग नही हैं ? एक पत्नी का कानून बनवाने के इतने इच्छुक नेता स्वयं एक महिला तक संतुष्ट थे क्यो ? अधिक लिखना ठीक नही। हिन्दू कोड बिल के जहरीले प्रभाव पर विस्तृत चर्चा आवश्यक है। यदि आप मेरे कथन से सहमत नही तो अपने तर्क लिखिये तो आपको उत्तर मिलेगा। मै इस सम्बन्ध मे विस्तृत विवेचना के लिये तैयार हूँ।